मेरा शहर, मुंबई – एन.जी.ओ. शक्ति

शिरीन भरुचा, नयना कथपालिया

बीत चुके बुरे दिनों का सिनरियो है यह, जब चारों ओर- नौकरशाही का बोलबाला था। सब कुछ गोपनीयता से ऐसा घिरा हुआ था जैसे लोहे की दीवार हो। नागरिकों की शिकवा शिकायतें सुनने वाला कोई न था और सब कुछ, सब तरफ बिखरा- बिखरा सा लगता था। जैसे कि सभी उस कपटी राजनेता के शिकार थे जो शहर को अपनी सत्ता का केन्द्र और धन कमाने का आधार मानता था जो शहर की सभी समस्याओं की ओर से आँखें मींचे रहता था और बहुत बार तो वह उन्हें और भी अधिक उलझा देता था । तथा शहर की तकलीफों को और अधिक बढ़ाने वाले वे लोग थे जो सारे देश के कोने से यहां दिन-प्रतिदिन लगातार चले आ रहे थे।

हमारे शहर का निर्माण तो 20 लाख लोगों के रहने के लिये हुआ था पर अब यहां दिमाग चकरा देनेवाली आबादी एक करोड़ अस्सी लाख लोग रह रहे है! अब और बढ़ते ही जा रहे हैं। अब यह शहर हर तरफ इतना भर गया है कि फटा पड़ रहा है । एक द्वीप पर बसा मुंबई शहर अपने चारों ओर विस्तार करने की सुविधा से संपन्न नहीं है, उसे तो बस खेदजनक रूप से ऊपर और ऊपर ही जाना है ।

1980 के दशक में नागरिकों ने संगठित होकर अपने क्षेत्रों में औपचारिक -संगठन बनाना शुरु किया, जिनके माध्यम से वे अपनी सामूहिक आवाज अधिकारियों तक पहुँचा सकते थे। तब शिकायतें और सुझाव लापरवाही से सुने जाते थे और जनता की आवाज अनसुनी कर दी जाती थी। लेकिन दृढता से पीछा करने और अधिकारियों से जहां संभव हो, चाहे रास्ते में ही मिल कर, अपनी सुनाने की जिद ने आखिर जनतांत्रिक दिमाग और सहानुभूतिपूर्ण काम पा ही लिये । इसे प्रेस की बढ़ती हुई शक्ति से भी बल मिला, जिसने शहर की समस्याओं को समाचारों के काबिल समझा और इस प्रकार प्रेस नागरिकों का एक आश्चर्यजनक मित्र बन गया । फिर केन्द्रीय सरकार द्वारा 2005 में पारित 'सूचना के अधिकार' का नया कानून भी नागरिकों को एक ऐसे शक्तिशाली औजार के रूप में प्राप्त हुआ, जिसके उपयोग से नागिरक किसी भी निर्णय के औचित्य की सूचना मांग सकते हैं और जिसे देने के लिये अधिकारी प्रतिबद्ध हैं।

शुरुआत हुई नगपालिका अधिकारियों द्वारा नागिरकों और उनके द्वारा सार्वजनिक उद्देश्य से स्थापित ट्रस्ट को छोटे छोटे और प्रयोग के तौर पर कामों को देने से। ये वे काम थे जो उनकी दृष्ट्री से प्राथमिकता वाले नहीं होते थे और न उन कामों के होने से उन्हें वोट ही मिलने वाले थे।

मुंबई में खुले -स्थानों का अनुपात बहुत ही कम है। जबकि सभी शहरों के लिये खुले स्थानों का आदर्श अनुपात प्रति 1000 लोगों के लिये 4 एकड़ खुला स्थान हैं। व्यस्त महानगरों में, जैसेकि न्यूयार्क में 1000 लोगों के लिये 6.33 एकड़ का अनुपात है और लंदन शहर में 4.84 एकड़ है। अब यदि मुंबई को देखें तो वह केवल 0.03 एकड़ है। यह संख्या वास्तव में कितनी खेदजनक है, यह इसी से जाना जा सकता है कि इस में, नेशनल-पार्क जो शहर के बाहरी मार्ग पर है और राज्यपाल के निवास की खुली भूमि, जो आम आदमी की पहुँच से बाहर है, को भी शामिल किया गया है। सारी दुनिया के लोगों का यह देखा-परखा तथ्य है कि, एक शहर में, खुले स्थान अपने साथ फायदों की जो दौलत लाते हैं वह कोई विलासता की वस्तु नहीं बल्कि एक आवश्यकता है। व्यवसायिक लक्ष्य - वाले लोगों को यह समझाना कठिन नहीं होगा।

हॉर्नीमन सर्किल गार्डन

1980 के दशक में, अनेक छोटे बगीचों और ट्रेफिक आयलेण्डों को जिन्हें नगरपालिका ने नजरअंदाज कर दिया था और जो असामाजिक तत्वों के अड्डे बन गये थे, रख-रखाव के लिये विभिन्न व्यवसाय-घरों को सौंपा गया। उनमें से एक था हॉर्नीमन सर्किल गार्डन। यह शहर के ऐतिहासिक व्यापारिक-क्षेत्र के केन्द्र में स्थित है। इसकी पूर्वी सीमा में निओ-क्लासीकल कारीगरी की विशाल इमारत, तब का टाउन हॉल और अभी की एशियाटिक लायब्रेरी स्थित है। यह अर्धगोलाकार कतार में, ढंके हुए मार्ग वाली इमारतों से घिरा हुआ है। 1880 में निर्मित इन इमारतों का सामने का भाग पत्थरों से बना है और कीस्टोनों पर मेहराबें बनी हैं। बगीचा तो यह सिर्फ कहने भर के लिये था, असल में सूखा और उजाड़, यह चोरों का एक अड्डा था जिसमें असामाजिक वर्ग के लोग भरे रहते थे। और अब, धन्यवाद उस व्यापारगृह और ट्रस्ट को जो इसकी देखभाल करते हैं और जिनके प्रयत्नों से अब यह हरा-भरा व विविधताओं से भरा एक नखिलस्तान है जिसे देखने रोज 3 से 4 हजार दर्शक आते है। यह बगीचा उस क्षेत्र के लोगों की आवश्यकताओं को प्रजातांत्रिक तरीके से पूरी करता है। यहॉ वे सब सुविधाएं उपलब्ध हैं, जो शहर के केन्द्र में स्थित एक बगीचे में होनी चाहिये। शौचालय, बच्चों का कोना, अभ्यास के लिये एकांत, अभिनय के लिये एक स्टेज, और एक लॉन जहॉ हरियाली में बैठकर आप कुछ खा सकें, स्वच्छ वातावरण, यह ठंड के महीनों में विभिन्न कलाकारों का स्वागत-स्थान बनता है और संगीत, नाटक, कविता-पाठ आदि जैसे सांस्कृतिक और सामाजिक कार्यों में सहायक होता है।

ओवल की कहानी

लेकिन असली सफलता की कहानी तो है, एक ऐतिहासिक 22 एकड़ के रिक्रिएशन ग्राउंड की जो सरकारी स्वामित्व का है और ओवल कहलाता है। यह एक विचित्र और शांत प्रकार का दृश्य बनाता है। इसके पूर्वी किनारे पर राज्य के हाईकोर्ट की अदभुत गोथिक इमारतें, युनिवर्सिटी का घंटाघर टावर, और कनवोकेशन हाल और शहर के सिविल कोर्ट की इमारतें हैं। पश्चिम किनारे पर है 1930 में निर्मित कलापूर्ण आवासीय इमारतें, जो केवल मियामी की इमारतों से स्पर्धा करती हैं यह प्राइम भूमि स्वयं सरकार द्वारा क्षेत्र और इमारतों की सूचि में, प्रथम श्रेणी के स्तर की तथा हेरीटेज मूल्य की मानी गई थी पर उसे खेदजनक रूप से उपेक्षित कर दिया गया। वह एक अप्रमाणित असुरक्षित- धूल से भरा कटोरा बन कर रह गया, अपने शासन द्वारा दिये गये रुतबे के बिल्कुल नाकाबिल! इस क्षेत्र के नागरिकों की कामना थी कि इस एतिहासिक और सामाजिक रूप से महत्त्वपूर्ण मैदान (इसकी जड़ें 1920 में जाती हैं, जब यह एक विशाल

हरे-भरे खुले-मैदान का एक भाग था जो शासकीय इमारतों के सामने की ओर था और जिसे पश्चिमी समुद्री लहरें गोद में खिलाती थीं), को पुनर्विकसित किया जाये और शहर के उन निर्धनतम लोगों को जिनकी की पहुँच रिक्रिएशन मैदानें तक नही है इसे वापस कर दिया जाय। शासन द्वारा इसका पुनर्विकास करने या फिर नागरिकों द्वारा उसे करने की स्वीकृति देने के लिये नागरिकों और शासन के बीच 15 वर्ष का एक लम्बा संवाद चला। कई बार तो वह असंवेदनशील नौकरशाही के साथ झगड़े में बदल गया। हर-बार जब-जब, अधिकारियों द्वारा पुनर्विकास के लिये योजनाएं प्रस्तावित की जाती तो वे भयंकर ही होतीं। उनमें नाना प्रकार के निर्माण कार्यों के सुझाव होते जैसे कि एक शापिंग मॉल, एक स्टेडियम, क्लब हाउस, चेजिंग शावर रूम्स, काफी हाउस और प्रदर्शिनियों के आयोजन इस मैदान में करने की इजाजत की बातें होतीं। इनमें से किसी की भी जरूरत मैदान में नहीं थी और लगभग सभी में बड़ा पैसा बनाने की बू आती थी। बहुत से कानूनी मुद्दे उसी हाईकोर्ट में पेश किये गए जो ओवल के पूर्वी किनारे पर स्थित है और वे सब मुद्दे थे ओवल की भूमि को उन लोगों के दुरपयोग या अवैध कब्जे से बचाने के लिये, जो इस तथ्य, एक कांक्रीट के शहर में एक हरित विस्तार की कीमत क्या है? या तो जानते नही थे या उससे भी बुरा यह कि जानबूझकर अनजान बनते थे।

1997 में अकस्मात और आश्चर्यजनक रूप से नागरिकों के ट्रस्ट को ओवल का पुनर्विकास करने की अनुमति शासन ने दे दी। हमें 6 माह के अन्दर प्रगति दिखलानी थी वरना बड़ी कठिनाई से प्राप्त अनुमति रद्द हो जाने वाली थी। इस योजना में आने वाली कठिनाइयों को समझने के लिये जमीनी सच्चाइयों को जानना जरूरी है। ओवल की जमीन का स्वामित्व तो राज्य शासन का है पर उसके आसपास की जमीन नगरपालिका की है। यद्यपि ये दोनों एक ही शासन के अंग हैं पर दोनों एक दूसरे को, आँख में आँख डाल कर नहीं देखते। इन दोनों की प्रदीर्घ दुश्मनी मे बीच फंसती थी बेचारी ट्रस्ट । सरकार के बहुत पुराने पड़ गये कानून भी समस्या को और जटिल बना देते हैं। तब फाइल सरकाने का पुराना खेल, जिसमें नोकरशाही माहिर है, भी शुरू हो जाता । प्रशासन के निचले तबके के भ्रष्ट अधिकारियों के लिये यह समझना कठिन हो रहा था कि नागरिक ऐसे कामों में जो पैसा लगाते हैं वह निस्वार्थ भाव लगाते है। रिश्वतें तो खुले तौर पर मांगी गई और जिनके कारण योजना में जानबूझकर देर भी हुई। उलझनों और विलम्ब के बावजूद किसी भी प्रकार की रिश्वत नहीं दी गई।

1999 में पुनर्विकास का कार्य हो गया और ट्रस्ट की ओर से शहर के लिये एक भेंट स्वरूप मैदान सभी के लिये खोल दिया गया। योजना के बुनियादी तत्वों के अनुसार, घूमने के लिये के लिए एक मार्ग, जल-सुविधा, और हरे-भरे ताड़-वृक्षों की सीमा रेखा, ये सब मिलाकर अब पार्क प्रथम श्रेणी के एक हेरीटेज स्तर के योग्य हो गया। ओवल में आया यह बदलाव सभी को पसंद आया। अब ओवल खेलते और मनोरंजन के लिये एक विस्तृत हरा-भरा मैदान था। वह उन हँसते-खेलते बच्चों और लोगों की प्रसन्नता से गूंजता था, जिनमें अन्यथा किसी क्लब या जिमखाना में जाने की न सामर्थ्य थी और न संभावना। यह मैदान वर्ष-भर सभी दिनों में सभी लोगों के लिये, बिना किसी शुल्क के खुला है। किसी को भी इस मैदान का उपयोग अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये करने या इसके किसी भाग का व्यापारिक उपयोग करने की इजाजत नहीं है।

राज्य सरकार को, जिसने बड़ी मुश्किल से अनुमति दी थी, उसे भी विश्वास हो गया कि इस योजना में कोई निहित स्वार्थ नहीं थें। इसलिये उसने मैदान के रख-रखाव और सुरक्षा के लिये आवश्यक कानून-कायदे भी बना दिये। हम इसे बदले हुए दृष्टिकोण की एक मिसाल भी मान सकते हैं। ओवल के पुनर्विकास से इसके चारों ओर की हवा के स्तर मैं गुणात्मक फर्क पड़ा है और इसलिये लोगों की जिन्दगियों में भी न केवल उनकी जो उस क्षेत्र में रहते हैं बल्कि उनकी भी जो बड़े भीड़वाले और घने बसे क्षेत्रों से यहां आते हैं। गुणात्मक फर्क पड़ा है।

सिटीस्पेस

सिटी-स्पेस की शुरुआत बहुत छोटे स्तर पर हुई । चार रेसीडेंट एसोसिएशनों, और एक एनजीओ ने अपने क्षेत्र को स्वच्छ करने के उद्देश्य से परस्पर मिलकर इसे बनाया। इस शुरुआत ने सभी के द्वारा महसूस की जा रही एक ऐसी जरूरत को मुखर किया जिसे अभी तक प्रकट नहीं किया जा रहा था। यह बात इसी तथ्य से जाहिर होती है कि केवल 10 दिनों के अंदर सिटी-स्पेस की सदस्य, शहर भर की 28 संस्थाओं ने स्वीकार कर ली। वर्तमान में इसकी सदस्य संख्या 550 है जिसमें आवासीय-एसोसिएशन, एनजीओ, व्यापारिक एसोसिएशन, बृहन्मुंबई के अन्य संस्थान और व्यक्तिगत लोग हैं।

सिटीस्पेस को यह बहुत जल्दी महसूस हो गया कि यदि कोई असरदार परिवर्तन लाना है तो, नागरिकों में कुछ कर गुजरने की जो बड़ी तीव्र इच्छा थी पहले उसे पूरा करना जरूरी था। जो कुछ संकोच था उसका प्रमुख कारण था नागरिकों के अधिकारों के बारे में सूचना की कभी रुकावट जो थी वह हमेशा नगरपालिका के इस कथन में थी कि 'यह नही हो सकता'। पुलिस कहती कि 'यह कानून है' और हम बेचारे ठहरे नागिरिक, इनकी शक्ति के आगे, हम कर ही क्या सकते है! ये काम तो है अधिकारियों का, हम तो बस अपना टेक्स चुकाते हैं, आदि, आदि । - यह सामंतवादी डर हमेशा से था उसे असंवेदनशील राजनीतियों और अधिकारियों द्वारा पूरी तरह भुनाया जा रहा था।

इसलिये सिटीस्पेस ने, शहर में सार्वजनिक खुले स्थानों के बारे में और उन्हें जिनसे खतरा था उनके बारे में, बड़ा अनुसंधान कार्य किया, जिसके परिणामस्वरूप मिली हुई सूचना का भाषांतर और सरलीकरण भी जरूरी था जिससे की वह आम आदमी के दिलो-दिमाग में उतर सके। इस सूचना ने लोगों में शक्ति भर दी। फिर वे उस दृढ़ विश्वास के साथ, जो जानकारी के साथ आता है, अधिकारियों तक अपनी समस्याओं के हल के लिये और अपने उन अधिकारों को जिनसे कि वे अनभिज्ञ थे मनवाने के लिये पहुँचे। शुरू शुरू में ये तरीका कभी-कभी कारगर सिद्ध हुआ पर इतना अन्य लोगों को इसे अपनाने की प्रेरणा देने के लिये काफी था। इस तरह यह आंदोलन आगे बढ़ा।

जैसे-जैसे ज्यादा नागरिक अपने क्षेत्रों की समस्याओं के साथ सिटीस्पेस से जुड़ते गये उसका कार्यक्रम विस्तृत होते गया। यह स्पष्ट हो गया कि यदि नागरिकों को जानकारी की शक्ति से लैस कर दिया जाये ते वे अपनी पसंद की और अपने क्षेत्र की समस्याओं को सुलझाने के लिये तत्पर रहते हैं। अपने क्षेत्र का स्वामित्व और हमेशा वहीं रहने की भावना जैसी और कोई बात प्रेरित नही करती, क्योंकि उससे जो लाभ, वे अभी होंगे और आने वाली पीढ़ियों तक रहेंगें।

वर्षों से एक परेशान करनेवाला मामला है सार्वजनिक भूमि पर अवैध कब्जों का? यह उन सब मिले जुले कारणों के परिणामस्वरूप होता है जिनमें प्रमुख हैं - अधिकारियों द्वारा समस्या को नजरअंदाज करना, उदासीनता बरतना से और बहुत-से मामलों में भ्रष्टाचार करना । अपने समय के प्रति यह एक खेदजनक टिप्पणी है पर वह वास्तविकता है जिसका हमें सामना करना है। इस समस्या का आकार बहुत अधिक बढ़ गया है। ऐसा अंदाज है कि लगभग 2.5 लाख हाकरर्स हैं जिन्होंने अवैध रूप से सार्वजनिक स्थान अपने उपयोग के लिये दबाये हुए हैं। इनमें से केवल 15000 लायसेन्स प्राप्त हैं, शेष लोगों को अधिकारियों ने अपनी मन-मानी से अस्थायी पद्धति से अनुमति दी है। जिसके लिये अंदाज है कि लगभग 365 करोड़ रु. प्रति वर्ष,रिश्वत, टेबल के नीचे से अधिकारियों को मिलती है।

बहुत पहले 1985 में, सुप्रीम कोर्ट आफ इंडिया ने शहर में हाकिंग-ज़ोन्स, जैसा कि सारी दुनिया में चलन है, स्थापित करने की एक योजना का अनुमोदन किया था। 1998 में सिटी-स्पेस को बाम्बे हाई कोर्ट में इस निवेदन के साथ जाने को मजबूर होना पड़ा कि वह 13 साल पहले के सुप्रीम कोर्ट के आदेश को कार्यान्वित करने के लिये नगरपालिका को

निर्देश दे। मामला अब फिर वापस सुप्रीम कोर्ट में अंतिम आदेशों का इंतजार कर रहा है। नागरिकों के लिये यह मार्ग कष्टप्रद और यातनापूर्ण है क्यों कि लड़ाई उन्हीं अधिकारियों के विरुद्ध लड़ी जा रही है जिनके विरुद्ध मामला प्रारंभ किया गया था।

जगह की कमी से पीड़ित मुंबई नगर की बड़ी समस्या है सभी प्रकार की सार्वजनिक जगहों पर, जो कि स्वयं शासन द्वारा अपनी विकास योजना में विशेष प्रयोजन से आरक्षित की गई है जैसे कि रिक्रिएशन-स्थल, खेल के मैदान, बगीचे-पार्क, समुद्री किनारे, मेनग्रोव, और रेल्वे पटरियों के आस पास की सीमा आदि पर, अवैध कब्जों की। इस समस्या को लेकर सरकार ने एक योजना बनाई जो सिद्धांततः ही त्रुटिपूर्ण थी। योजना के अनुसार, 'यदि असमानता दूर करना है तो उसके लिये असमान कानून होना ही चाहीए।'- तद नुसार सभी अवैध कब्जा करने वालों को निशुल्क आवास दिये जाने का प्रावधान बना और वह आवास भी अक्सर उसी भूमि पर दिया जाना तय हुआ, जिस पर इन्हों ने कब्जा कर रखा था। सिटीस्पेस का इस पर तर्क यह था कि एक प्रत्यक्ष अवैधानिकता को पुरस्कृत करने के मुद्दे से हटकर भी देखें, तो एक ऐसी सार्वजनिक आरक्षित भूमि पर कोई पुनर्वास नहीं हो सकता, जिसका आम जनता के लिये विशेष उपयोग किया जाना है। सिटीस्पेस ने बाम्बे हाई कोर्ट से गलत राय पर आधारित ऐसी सभी योजना ओं पर स्टे-आर्डर ले लिया और अभी पिछले महिने ही सुप्रीम कोर्ट आफ इंडिया ने हमारे तर्कों का समर्थन किया और स्पष्ट निर्णय दिया कि अवैध कब्जा करने वालों को कोई कानूनी या मौलिक अधिकार सार्वजनिक भूमि पर रूकने का नहीं है, एक मिनिट के लिये भी नहीं है।

उपसंहार

कहावत है कि 'अंत भला तो सब भला' - पर सच तो यह है कि नागरिकों के लिये जो अच्छा हो गया है उसे कायम रखना है, इस के लिये तो उनकी लड़ाई कभी न खत्म होने वाली लड़ाई है। उदाहरण के लिये जब हॉर्नीमल सर्किल गार्डन का पुनर्विकास हो चुका और जनता द्वारा उसका सदउपयोग होने लगा तो सभी ने उसे सराहा। पर कुछ समय बाद राज्य सरकार के एक मंत्री महोदय को यह बगीचा बिल्कुल अनुपयोगी लगा। उन्होने घोषणा की कि इस अनुपयोगी गार्डन को मिटा कर इसके स्थान पर एक बहुमंजली पार्किंग लॉट बनाया जाना चाहिये। तब मंत्री को गार्डन के सदुपयोग के बारे में शिक्षित करना पड़ा, तब कहीं जाकर उन्होंने पीछा छोड़ा। इसी तरह से ओवल के बारे में, उसके नियम ढीले करने के बारे में लगातार दबाब डाले जाते हैं। जैसे कि वहाँ यह समारोह करने दिया जाये या वह विश्व स्तर का आयोजन हो जाये, या बस कुछ दिनों के लिये ये स्ट्रक्चर बना है। लाउड स्पीकर लगाने की मुमानियत है तो क्या? एकाध बार लगा लेने में क्या हर्ज है, आदि- आदि..... जवाब में भाग्य से हमारे ये तर्क कि मैदान के नियम तोड़े नही जा सकते और उन्हें तोड़ कर हमें एक बुरी परंपरा कायम नहीं करनी चाहिये, काम आ जाति हैं और मैदान का दुरपयोग होने से बच जाता है।

यद्यपि शहर के लिये ये महत्वपूर्ण सुधार हैं पर साथ ही इसका लाभ यह हुआ है कि नागरिकों और अधिकारियों को यह महसूस हो गया है कि हमारा एनजीओ-क्षेत्र सकारात्मक है और यह भी कि एनजीओ सरकार के सहयोग से शहर में बड़े-बड़े सुधार ला सकते हैं। तो भी इससे यह बात नहीं रुकती कि अनेक एनजीओ अपने संशय पूर्ण कार्यक्रमों के द्वारा एनजीओ आन्दोलन की शक्ति और एकता को तोड़ने में मदद कर रहे हैं। इस खबर से वे अधिकारी लोग जिन्हें एनजीओ ने टोंच-टोंच कर सही काम कराये है काफी उत्साहित हैं इस दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति से भी असरदार तरीके से निपटा जायेगा।

अपने अनुभवों से हमने बहुत कुछ सीखा है और एनजीओ ने शहर के लिये जो अनेक कल्याणकारी कार्य किये है, उनके द्वारा अनेक गुणात्मक परिवर्तन लाये जा सकते है। जो सीखा वह निम्नानुसार है ले - भग्गू एनजीओ

प्रथम तो यह कि जनता की राय बनाई जाये और कार्य की प्रक्रिया में समाज की साझेदारी हो ।

दूसरे यह कि दुर्लक्षित और अनुपयोगी पड़े खाली स्थानों पर हमेशा लालची नजरें पड़ा करती हैं, विशेषकर तब, जब की शहर में खुले मैदानें का अभाव हो और निर्माण कार्य पैसों का एक खेल हो।

- 'सतत चौकसी' भी खुले मैदानों की कीमत है।

तीसरे यह कि यद्यपि कुछ मामलों में विरोधी कानूनी कार्यवाही करना आवश्यक होता है पर फिर भी उसका नतीजा जैसा चाहिये वैसा नहीं मिलता। भले ही कानून नागरिकों के पक्ष में हो पर अंतहीन कानूनी प्रक्रिया और उस पर होने वाला भारी खर्चा न्याय के लिये अदालत में जाने से रोकता है। यह सच ही कहा जाता है कि 'भारत में कोईभी मामला कोर्ट में अनंतकाल तक अनसुलझा ही रहता है।'- यहाँ तक कि यदि कोर्ट नागरिकों के पक्ष में कोई फैसला कर भी देता है तो दुर्भाग्यवश यह फैसला उन अधिकारियों के विरुद्ध होता है, जिन्हें कि इसे लागू करना है। वे बड़े बेमन से और टालने के इरादे से आदेश का पालन करते हैं। उसे लागू करने में जितनी संभव हो देर लगाते है और कभी -कभी तो कानून ही बदल डालने का आसान तरीका, रातों-रात आर्डीनेन्स जारी करने का, ढुंढ़ निकालते हैं।

- 'सही होना ही काफी नहीं है।'

चौथे यह कि आपको मालूम होना चाहिए कि प्राचीन समय से चली आ रही सभी शासन प्रणालियां आपको हराने के लिये बनाई गयी थीं । लेकिन नौकरशाही को अपना मित्र बनाना और जो वह सुझाये उस रास्ते पर, चाहे फिर वह कितना ही घुमाव फिराव और बेमानी क्यों न दिखता हो, चलना आपके लिये सबसे अच्छा उपाय है।

-बरबाद हुआ वक्त, अच्छी तरह बिताया वक्त हो सकता है।

पाँचवां यह कि अधिकारियों और नागरिकों दोनों को यह समझना चाहिए कि समाज-हित के लिये किये जाने वाले अधिकतर निर्णय शासक और शासित के बीच परस्पर विचार-विनिमय की प्रक्रिया से ही लिये जाते हैं।

-शासन और नागरिक दोनों फेन्स के आरपार खड़े-विरोधी नहीं हैं।

छटवां यह कि अब नागरिक 'सूचना के अधिकार' - कानून से लैस है। यह जानकारी मांग सकता है और देख सकता है कि कोई एक निर्णय क्यों लिया गया और किसके द्वारा लिया गया? तब वह उस निर्णय के प्रति प्रश्न भी कर सकता है और एतराज भी। गोपनीयता का पर्दा अब सौभाग्य से उठ चुका है।

-अपने अधिकारों को जानो और जो हथियार आपको दिये गये हैं उनसे शक्तिमान बनो।

ये छह दिव्य-आदेश, एनजीओ की बाइबल का एक भाग है और यह तो भविष्य ही बतलायेगा कि दसवें अंतिम आदेश तक पहुँचने के लिये कितने और अनुभवों की जरुरत पड़ेगी। दुर्भाग्य से शहरी क्षेत्र में सुधारों को लाने का कोई शार्टकट नहीं है। अवश्य ही कुछ समस्याएं अन्य दूसरी समस्याओं से कहीं अधिक जटिल और कठिन होती हैं पर ऐसा नहीं है कि उनका कोई हल ही नहीं होता। यह सच है कि राज्य सरकार अब उन नागरिकों की उपेक्षा नहीं कर सकती, जिनका सहयोग और सहभाग एक प्रभावपूर्ण प्रशासन के लिये आवश्यक है। भारत सरकार ने इस तथ्य को मान्यता देते हुए भारतीय संविधान में आवश्यक संशोधन किया है जिसेके अंतर्गत यह आवश्यक है कि स्थानीय स्तरों पर किसी भी निर्णय कों लेने की प्रक्रिया में नागरिकों को शामिल किया जाये।

-यह एक शुभ शकुन है मेरे शहर के एनजीओ वालों के लिये।

अनुवादक : ज. कु. निर्मल

■ ■ ■ ■ ■